लोकसाक्ष्य

इतिहास और लोकसाक्ष्य

किसी भी अंचल या जनपद का इतिहास उसके निवासियों का इतिहास होता है, उस पर शासन करने वाले राजाओं-महाराजाओं या नवाबों का नहीं। इतिहासकार द्वारा राजा-महाराजा के युद्धों, विदेशी संबंधों, राज्य में किये गये कार्यों, निर्माणों और सुधारों का क्रमबद्ध वर्णन महत्त्वपूर्ण समझा जाता था और उससे ही एक विशिष्ट दृष्टि निर्मित हो जाती थी, जिससे वहाँ की जनता की आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक स्थिति का विवरण नियंत्रित होता था। इस तरह इतिहास के केन्द्र में सत्ता ही प्रधान रही, जबकि इतिहासकार की दृष्टि जनता पर केन्द्रित होनी चाहिए।इ तिहास के केन्द्र में जनता की प्रधानता जरूरी है और अगर राजा-महाराजा का भी इतिहास लिखना है, तो वह भी जनकेन्द्रित दृष्टि से लिखा जाना उचित है।

यही जनकेन्द्रित दृष्टि इतिहास के प्रमाणों या साक्ष्यों के लिए प्रेरक है। शिलालेख, सनदें, ताम्रपत्र आदि अधिकतर राजाओं-महाराजाओं और उनके सामन्तों द्वारा उन्हीं के पक्ष में लिखवाये प्रमाण या साक्ष्य हैं और उन्हीं को इतिहासकार प्रामाणिक मानता है। लोकसाक्ष्यों को अप्रामाणिक कहकर उपेक्षित कर दिया जाता है। गहराई से देखा जाये तो लोकसाक्ष्यों में स्वार्थ की प्रवृत्ति नहीं होती, जबकि राजा या सामन्त अपने यश के लिए या किसी दूसरे स्वार्थवश शिला या कागज पर लिखवाकर कई प्रमाण खड़े कर देते हैं। वस्तुतः इतिहासकार को तटस्थ रहकर किसी भी साक्ष्य पर विचार करना चाहिए । सत्ता द्वारा स्थापित साक्ष्यों के उद्देश्य को भी दृष्टि में रखने की जरूरत है।

लोकसाक्ष्य कई प्रकार के होते हैं, लेकिन वर्गीकरण की दृष्टि से उन्हें निम्न वर्गों में रखा जा सकता है-

(अ) मौखिक परम्परा में जीवित-जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक मौखिक रूप में प्रचलित रहते हैं, जैसे-किंवदंतियाँ लोककहावतें, लोककथाएँ, मिथ, लोकनाट्य, लोकगीत आदि।

(ब) लिखित परम्परा में सुरक्षित-सनद, पटौ, पत्र, ग्रंथ आदि, जो तत्कालीन तथ्यों का उल्लेख या वर्णन करते हैं और पिढ़ी-दर पीढ़ी सुरक्षित रहते हैं।

(स) उत्कीर्ण-प्रस्तर और काष्ठ तथा ताम्रादि पर खोदे हुए लेख, लोकमूर्तियाँ आदि।

(द) चित्रांकित-दीवालों, गुहाओं, कागजों, कपड़े, चमड़े आदि पर अंकित लोकचित्र ।

इन वर्गों में संकेतित लोकसाक्ष्यों की विशेषता यह है कि वे लोक में प्रचलित होते हैं। उनकी रचना भले ही किसी साधारण व्यक्ति के द्वारा हुई हो, पर वे लोक द्वारा स्वीकृत होकर लोकमान्य बन जाते हैं। दूसरी विशेषता है कि वे हर प्रकार के भेदभाव से दूर, निरपेक्ष या पक्षपातविहीन होते हैं। इन दोनों विशेषताओं के कारण एक प्रजातांत्रिक देश में उनका महत्त्व और भी बढ़ जाता है। एक विशेष बात यह भी है कि लोकसाक्ष्य लोकजीवन से जुड़े होने से अधिक उपयोगी और प्रामाणिक सिद्ध होते हैं। राजा द्वारा निर्मित या स्थापित साक्ष्य अतिरिक्त दबाव के कारण उसके राज्यकाल में ही मान्य रहता है, बाद में लोक से उसका कोई संबंध नहीं रहता। यह बात अलग है कि उसमें कोई आकर्षण या चमत्कार हो, जो लोक को बाँध सके।

मैं यहाँ हर वर्ग के कुछ ऐसे उदाहरण प्रस्तुत करता हूँ, जो बुंदेलखंड के इतिहास में अपनी अहं भूमिका के

© इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र पहला संस्करणः १९९५

All rights reserved. No part of this book may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, including photocopy, recording or by any information storage and retrieval system, without prior permission in writing.

कारण आज भी विख्यात हैं और जिन्होंने लोकसंस्कृति केइ तिहास को रचा है। प्रसिद्ध इतिहासकारों के समक्ष इन लोकसाक्ष्यों को उपस्थित करते हुए मैं उनकी शक्ति और प्रभाव के द्वारा उनके दुर्लभ व्यक्तित्व की पहचान कराना चाहता हूँ, ताकि बुंदेलखंड का इतिहास उन्हें और उन जैसों को अपनाकर अपने सही स्वरूप में अवतरित हो सके।

मौखिक परम्परा में तो कई लोकसाक्ष्य ऐसे हैं, जो आज भी अपनी प्रभावक्षमता के कारण अमर हैं। कारसदेव की गाथा में चराकगाही संस्कृति का यथार्थ चित्र उभरा है, जो चंदेलकालीन अहीर, गड़रियों और गूजरों की संस्कृति रही है।इ सी तरह आल्हा की गाथा में चंदेलकालीन लोक का इतिहास छिपा है। तत्कालीन वीरतामूलक प्रवृत्ति का प्रतिनिधित्व, बदला लेने और स्वाभिमानी हठ की मानसिकता का चित्रण तथा नारी के मूक या मुखर आमंत्रण पर अपहरण करने के संघर्ष की अभिव्यक्ति तत्कालीन लोक की चित्तवृत्ति का लोकसाक्ष्य है। वत्सराज के 'रूपकषटकम्' में नारी अपहरण का उदाहरण मिलता है। इस युग में यह समस्या लोककथा और खेल तक पहुँच गई थी। 'सुअटा' नामक कुमारी कन्याओं के खेल में भूत या राक्षस अथवा दानव कही जाने वाली मूर्ति या भित्तिचित्र स्कंद का विकृत रूप है। कुमारियाँ अपहरण से रक्षा के लिए अनिष्टकारी ग्रहों के समुच्चय के प्रतीक स्कंद की पूजा करती हैं और मनवांछित पति पाने के लिए गौरी की।

एक उदाहरण जैतपुर के राजा पारीछत का है, जिन्होंने १८५७ ई. के बहुत पहले सन् १८४०-४२ में अंग्रेजों से युद्ध किया था। आजादी की लड़ाई के लिए उन्होंने सं. १८९३ वि. (१८३६ ई.) की होली-उपरांत पहले मंगल की वासंती संध्या पर चरखारी में बुढ़वामंगल का आयोजन किया था, जिसमें उन्हें ही नेतृत्व का दायित्व सौंपा गया था। एक उक्ति इसके प्रमाण में लोकप्रचलित है-'सबरे राजा जुरे चरखारी बुढ़वामंगल कीन। पुन सब जेई आड़ गढ़िया में, पारीछत को मुहरा दीन।।' यह खबर अंग्रेजों तक पहुँची और कैथा की छावनी ने जैतपुर पर धावा बोल दिया। कई जगह युद्ध हुए। एक लोकगीत कहता है-

पैली न्याँव धँधवा भई, दूजी री कछारन माँह।

तीजी मानिक चौक में, जहँ जंग नची तलवार।।

धँधवा, कछारों और मानिक चौक में भयंकर युद्ध हुए। इतिहास भले ही आना-कानी करे, पर यह लोकगीत प्रस्तर अभिलेख से भी कीमती है। लोककवि राजाश्रित चारण नहीं है, जो सिर्फ राजा की प्रशस्ति करे। वह तो लोक का इतिहास लिखता है और वह इतिहास, जिसे इतिहास भी नहीं जानता। युद्धों में पारीछत की पराजय हुई और जैतपुर पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया। विवश होकर पारीछत बगौरा की डाँग (जंगल) में चले गये। फिर युद्ध की तैयारी और अंग्रेजों की फौज से युद्ध। पारीछत गुरिल्ला या छापामार हमलों का सहारा लेते थे, अतएव कई युद्ध हुए। लाहौर को जानेवाली अंग्रेजी फौज भी नौगाँव से डाँग की तरफ मुड़ गई। कई बार राजा जीते, कई बार हारे। आखिरकार जंगलों और पहाड़ों में भागते फिरे, ताकि आजादी के लिए फिर जूझ सकें। इस वर्णन का साक्षी है-'पारीछत कौ कटक' जो द्विज किशोर रचित एक लोकप्रबंध है और जिसकी हस्तलिखित प्रति की अंतिम पुस्तिका इस प्रकार है-'इते श्री राजा पारीछत जू कौ कटक दुसरो संपूरन समापता भादों बदि २ संवत् १९७१, मुकाम छत्रपुर महलन के दुवरै मोदी के पछीत लिषते पं. दुबे भईया लाल...। ' पुष्पिका के अनुसार प्रतिलिफि-काल सं. १९७१ (१९१४ ई.) है। इस लिखित लोकसाक्ष्य की कुछ पंक्तियाँ देखें-

१. कर कूँच जैतपुर सैं बगौरा पै मेले।
चौगान पकर गये मंत्र अच्छौ खेले।
बगसीस भई ज्वानन खाँ पगड़ी सेले।
सब राजा दगा दै गये नृप लड़े अकेले।।

© इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र पहला संस्करणः १९९५

All rights reserved. No part of this book may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, including photocopy, recording or by any information storage and retrieval system, without prior permission in writing.

२. एक कोद अरजंट गओ एक कोद जरनैल।
डाँग बगौरा की घनी भागत मिलै न गैल।
नृप पारीछत के लरे गओ निस्चर कौ तेज।
जात हतो लाहौर खाँ अटक रहो अंगरेज।।

३. सब राजा रानी भये, पर पारीछत भूप।
जात हती हिंदुवान की, राखो सब कौ रूप।।

४. काऊ नैं सैर भाखे काऊ नें लावनी।
अब के हल्ला में फुँकी जात छावनी।।

५. दो मारे कवि तान बिगुल बाँसुरी वालौ।

पहले उदाहरण में बगौरा के युद्ध की तैयारी का वर्णन है, तो दूसरे में अंग्रेजों की पराजय का। यह भी बताया गया है कि अंग्रेजी फौज लाहौर जा रही थी, पर यहाँ उलझ कर रह गयी। तीसरे में पारीछत को देश की प्रतिष्ठा का रक्षक कहा गया है और चौथे में सैर तथा लावनी के राष्ट्रीय लोककाव्य की शक्ति का आभास है। पाँचवे में लोककवि द्वारा मारे गये दो दुश्मनों का उल्लेख है। स्पष्ट है कि कभी कविता से छावनी फुँकी है और कभी कवि के हाथों से।

लोकप्रचलित उक्तियों में कहीं पारीछत का वीरता का गान है और कहीं उनकी परिस्थिति का। एक-एक उदाहरण देखें-

१. फिरंगियन की सेना गरद मिल जाय।
पारिछित कौ तेगा कतल कर जाय।
भागे फिरंगी महोबे को जायँ।
पारीछत राजा खदेड़त जायँ

२. महुआ भूँजे खपरिया में।
पारीछत ने धमके दुफरिया में।।

लिखित परम्परा का एक उदाहरण अभी दे चुका हूँ। बुंदेलखंड की कटक काव्य-धारा में उपेक्षित ऐतिहासिक युद्धों का वर्णन है। छोटे आकार के युद्धकाव्य इतिहास के उपेक्षित अध्यायों के आलेख हैं, भले ही उनका नामकरण रासो या रायसो अथवा कटक या समौ-कुछ भी हो। उदाहरण के लिए 'बाघाइट कौ रायसौ' इतिहास की एक महत्त्वपूर्ण गुत्थी सुलझाता है। ओड़छा और दतिया के राज्य एक ही घराने के थे और सदैव परस्पर प्रेम से रहे, किन्तु अपने-अपने जमींदारों का पक्ष लेकर संघर्ष में फँस गये। दतियानरेश पारीछत ने बाघाट के दिमान गंधर्वसिंह के विरुद्ध अपनी सेना भेजकर उसे पराजित किया, जिसका प्रमाण पोलिटिकल सुपरिण्टेण्डेण्ट, बाँदा के ४ मई एवं १६ मई, १८१६ ई. के पत्रों में मिलता है। इस छोटी ऐतिहासिक घटना का महत्त्व १८५७ ई. की क्रांति की पृष्ठभूमि के रूप में आँका जा सकता है, क्योंकि तज्जन्य वैमनस्य के कारण ही ओड़छा ने अंग्रेजों का विरोध किया था एवं दतिया ने उनका पक्ष लिया था। राज्यों के परस्पर युद्ध और झगड़े ही स्वतंत्रता-संग्राम की असफलता के प्रमुख कारण थे

उत्कीर्ण लोकसाक्ष्यों में सबसे सटीक उदाहरण सती स्तम्भों का है और उसे डॉ. हीरालाल जैसे इतिहासकारों ने अपनाया है। प्रस्तरस्तम्भों पर लोकमूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं और सबसे ऊपर दोनों कोनों की और सूर्य और चन्द्र अंकित हैं। एक इतिहासकार विद्वान् सूर्य-चन्द्र के अभिप्राय को ठीक से नहीं समझ सके और उन्होंने उसे चंदेलों की उत्पत्ति से जोड़ दिया। उन्होंने लिखा-'इस कथा की प्रसिद्धि कुछ पाषाण स्तम्भों से भी प्रकट होती है। इनमें परस्पर हाथ पकड़े हुए स्त्री-पुरुष के दो चित्र अंकित हैं।... दिहिनी ओर चन्द्र तथा सूर्य के चित्र हैं। किंतु सूर्य और चंद्र सात-साथ उदय नहीं होते।

© इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र पहला संस्करणः १९९५

All rights reserved. No part of this book may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, including photocopy, recording or by any information storage and retrieval system, without prior permission in writing.

सूर्य चन्द्र का एक साथ अंकन संभवतः हेमवती-कथा की ओर निर्देश करता है, क्योंकि उस कथा में यह उल्लेख है कि ग्रीष्म ऋतु में जब सूर्य की किरणें प्रखरतम हो रही थीं, तब भगवान् चन्द्र हेमवती के सम्मुख आये।' (जे. ए. एस. बी., १८७७ पृ. २३४-२३५ एवं १८६८ पृ. १८६)। वस्तुतः यह अबिप्राय लोकचित्रों और काष्ठ पर बनायी आकृतियों में भी प्रयुक्त होता है और लोककला की पहचान बन गया है। एरण का सती-स्तम्भ सबसे प्राचीन पाँचवीं शती का है, जिसमें सेनापति गोपराज के हूणों के विरुद्ध लड़ने और मारे जाने का साक्ष्य मिलता है। बम्हनी गाँव (जिला-दमोह) में एक सती-स्तम्भ पर लेख है कि 'परम भट्टारक राजाधिराज बली (?) त्रयोपेत कालंजराधिपति श्रीमद हंमीरवर्म्मदेव विजय राज्ये संवत् १३६५ समये महाराजपुत्र श्री बाघदेव भुञ्ज्यति अस्मिन काले वर्तमाने ब्राह्मणी ग्रामे', जिससे इतिहासकार ने स्पष्ट कर दिया है कि कुम्हारी इलाके में सिंगौरगढ़ के राजा बाघदेव का राज्य था और वह कालंजर के चंदेलनरेश हम्मीरदेव का माण्डलिक था। तत्कालीन नाटककार वत्सराज के 'रूपकषटकम्' में सती का प्रमाण मिलता है। इस अंचल में सती-स्तम्भों की भरमार है, जिनके सर्वेक्षण से इतिहास को कुछ नये तथ्य मिलेंगे।

तोमरकालीन ग्रंथों में अखाड़ों की चर्चा आई है। उनकी एक समृद्ध परम्परा पूरे बुंदेलखंड में रही है। आचार्य केशव ने तो अखाड़े को यानी कि संगीत, कविता, नृत्यादि कलाओं के अखाड़े को राजनीति का लक्ष्य बना दिया था-'कियो अखारो राज को, सासन सब संगीत।' ओरछा के अखाड़े ने रीतिकाव्य को जन्म दिया था। लेकिन इसी अखाड़े की एक विनोदपूर्ण पंक्ति ने पन्नानरेश अमानसिंह को अकोड़ी की गढ़ी पर आक्रमण करने को विवश कर दिया। फल यह हुआ कि उनके बहनोई प्रानसिंह मारे गये और उनकी बहिन के अँचरा में बहनोई का सिर गिरकर ऐसे हँसा, जैसे वह भाई-बहिन के रिश्ते का उपहास कर रहा हो। दूसरी तरफ ओरछानरेश हरदौल ने देवर-भाभी के आदर्श रिश्ते की स्थापना के लिए विषपान कर लिया था, जिसके साक्षी हैं हर गाँव-नगर में पूजते हरदौल के चबूतरे। क्या अखाड़े और चबूतरेइ तिहास की वस्तु नहीं हैं ? मैरी समझ में बुदेलखंड का मध्ययुगीन इतिहास इन जैसे लोकसाक्ष्यों के बिना अपूर्ण रहेगा।

महोबा के मनियाँदेव को प्रसीद्ध इतिहासकार वीं. ए. स्मिथ ने मनियाँदेवी माना है और उसके आधार पर चंदेलों की उत्पत्ति आदिवासी गोंड़ या भर से सिद्ध कर दी है। परंतु स्मिथ का मत इसलिए मान्य नहीं है कि मनियाँदेव मणिभद्र यक्षदेवता हैं। उन्हें (चंदोलों को) हिन्दुआइज्ड गोंड कहना उचित नहीं है। लोकमूर्तियों और लोकचित्रों का अपना ऐतिहासिक महत्त्व है। दमोह जिले के रोंड़ गाँव में सून नदी के किनारे प्रस्तर पर अश्वारोही का चित्र अंकित है और लिखा है-'श्री बाघदेवस्य दागी बैजू संवत् १३५९', जिससे बाघदेव के शासन का पता चलता है। मृणमय मूर्तियों से तत्कालीन संस्कृति का चित्र मुखर हो जाता है।

उक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि लोकसाक्ष्य किसी भी अंचल के इतिहास-लेखन में सहायक होता है। संस्कृति का इतिहास लोकसाक्ष्यों की अनुपस्थिति में नहीं लिखा जा सकता। जन-जन या लोक की संस्कृति औरइ तिहास ही सही इतिहास है और वह लोकसाक्ष्यों के बिना अपूर्ण है। इतिहास और संस्कृति की समस्यायें लोकसाक्ष्यों से सुलझायी जा सकती हैं। इसलिए विद्वानों से मेरा अनुरोध है कि वे लोकसाक्ष्यों को उपेक्षा की दृष्टि से न देखकर उन्हें प्रेमपूर्वक अपनायें। इससे हमारा इतिहास-लेखन हर पक्ष के लिए उपयोगी होगा और प्रजातंत्र की अपेक्षाएँ पूरी करेगा।

© इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र पहला संस्करणः १९९५

All rights reserved. No part of this book may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, including photocopy, recording or by any information storage and retrieval system, without prior permission in writing.